इकाई 13 एकात्मकता के प्रकार

इकाई की रूपरेखा

13.0 उद्देश्य

13.1 प्रस्तावना

13.2 सामाजिक एकात्मकता

13.3 यांत्रिक एकात्मकता

- 13.3.1 सामूहिक चेतना
- 13.3.2 सामूहिक चेतना: प्ररूप के आधार पर
- 13.3.3 सामूहिक चेतना: तत्वों के आधार पर

13.4 सावयवी एकात्मकता

- 13.4.1 सावयवी एकात्मकता में सामूहिक चेतना के नए रूप
- 13.4.2 प्ररूप के आधार पर
- 13.4.3 विषय-वस्तु के आधार पर

13.5 सारांश

13.6 शब्दावली

13.7 कुछ उपयोगी पुस्तकें

13.8 बोध प्रश्नों के उत्तर

13.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप के द्वारा सम्भव होगा

- यान्त्रिक एकात्मकता व इसके विशेष प्रकार का सामाजिक संरचना (आदिम समाज जैसी) से सम्बन्ध
- खण्डात्मक सामाजिक संरचना (आदिम समाज) में **दण्डात्मक क़ानून** द्वारा एकात्मकता मज़बूत करने में योग-दान
- अविकसित समाजों में सामूहिक चेतना का महत्व
- जटिल सामाजिक संरचना में सावयवी एकात्मकता श्रम के विभाजन पर आधारित
- जटिल सामाजिक संरचना में एकात्मकता के सन्दर्भ में **क्षति-पूरक क़ानून** की भूमिका इनमें सामूहिक चेतना का परिवर्तित रूप आदि की व्याख्या तथा विवेचना करना।

13.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई के भाग 13.2 में सामाजिक एकात्मकता के विचार को संक्षेप में दिया गया है तथा एकात्मकता के पहले प्रकार का वर्णन 13.3 भाग में **यांत्रिक एकात्मकता** के सन्दर्भ में किया गया है। दण्ड समाज द्वारा उस व्यक्ति को दिया जाता है जिसने सामाजिक मान्यताओं की अवहेलना की है। दण्ड देने से समाज की प्रभुता व एकात्मकता पुन: निर्धारित होती है। इस भाग के उपभागों में सामाजिक संरचना में **सामूहिक चेतना** के महत्व व परिभाषा को तथा इसकी प्रकृति को समझा गया है। **सावयवी एकात्मकता** पर भाग 13.4 में चर्चा की गई है। इस भाग में जटिल समाजों

की संरचना के सन्दर्भ में कानून के क्षति-पूर्ति वाले पक्ष को प्रस्तुत किया गया है तथा सामाजिक संरचना में श्रम विभाजन सदस्यों को पारस्परिक निर्भर बनाता है व समाज में एकात्मकता बनाए रखता है, इसकी चर्चा की गई है। इस भाग के उपभागों में सामूहिक चेतना के प्ररूप व गुणों (content) में किस प्रकार बदलती हुई परिस्थितियों से परिवर्तन आ गया है उसको भी दर्शाया गया है। इकाई के अन्त में (भाग 13.5) सारांश प्रस्तुत किया गया है।

13.2 सामाजिक एकात्मकता

इस इकाई में आर्थिक एवम् सामाजिक एकात्मकता अथवा एकात्मकता से सम्बन्धित दर्खाइम के विचारों की चर्चा की गयी है। दर्खाइम ने इनका अध्ययन अपनी पुस्तक, *द डिविज़न ऑफ़ लेबर इन सोसाइटी*, में किया है। दर्खाइम की रुचि सामाजिक जीवन के नियंत्रण और संचालन की शक्तियों को जानने में थी। अपने विचारों को धारणात्मक रूप देने हेतु उसने खण्डात्मक व जटिल समाजों के बीच विभेद किया। इन समाजों के क्या लक्षण हैं तथा उनमें किस प्रकार से एकात्मकता आती है? इन प्रश्नों का उत्तर उसने एकात्मकता के दो प्रकारों में वर्गीकरण द्वारा दिया है। इन प्रश्नों का उत्तर सकारात्मक रूप से देते हुए उसने कहा है कि एकात्मकता दो प्रकार की (i) यांत्रिक व (ii) सावयवी होती है। उसने इनमें भेद निहित कानूनों द्वारा किया है।

दर्खाइम के समाजशास्त्रीय चिंतन में **सामाजिक एकात्मकता** (solidarity) का विशेष महत्त्व है। इस इकाई में हमने दर्खाइम के एकात्मकता पर विचारों को विस्तार में समझाते हुए यांत्रिक तथा सावयवी एकात्मकता पर विशिष्ट चर्चा की है। आइए, पहले यांत्रिक एकात्मकता को समझें।

13.3 यांत्रिक एकात्मकता

यांत्रिक एकात्मकता की प्रकृति को दर्खाइम ने सूइ जेनरिस (sui generis) माना है अर्थात् जिसका जन्म स्वत: सहजता से हुआ हो। यह व्यक्ति को समाज से प्रत्यक्ष रूप से जोड़ती है। इस एकात्मकता का उदय समूह के सदस्यों के समान जीवन क्रम व एक से ही अनुभवों से होता है। एक यंत्र या मशीन से बनी वस्तुएं सभी समान आकार व गुण की होती हैं, इसी प्रकार आदिम समाज में ऐसा लगता है कि हर व्यक्ति (लिंग व आयु समान होते हुए) दूसरे व्यक्ति जैसा ही है। उनमें ऐसी समरूपता हैं कि वह यंत्रवत् हों या एक ही मशीन की उत्पत्ति हों। ऐसी समरूपता के आधार पर जो समाज में एकात्मकता बनती है, उसे यांत्रिक एकात्मकता कहा गया है।

दर्खाइम ने इस बात का समर्थन किया है कि एक विशिष्ट प्रकार की सामाजिक संरचना समरूपता प्रदान करती है। इनके लक्षणों का वर्णन एक समरूपी खण्डों की व्यवस्था की तरह किया जा सकता है, जिसमें प्रत्येक खण्ड एक दूसरे के समान है। समरूपी तत्व खण्डों में स्वयंमेव निहित होते हैं, अत: समाज अत्यंत ही छोटे-छोटे भागों में विभक्त हो जाता है जो व्यक्ति को पूर्णत: ढक लेता है। मूल रूप से, खण्डात्मक समाज **कुल (clan)** पर आधारित थे तथा ये लक्षण अविकसित समाजों में व्यापक रूप से पाये जाते थे। किन्तु विकास की प्रक्रिया में खण्डात्मक लक्षण समाज में अधिक समय तक लोकप्रिय नहीं रह सके। इनका विस्तार क्षेत्रीय आधारों पर होने लगा और जनसंख्या का बहु भाग धीरे-धीरे रक्त संबंधों (वास्तविक अथवा कल्पित) द्वारा विभाजित न होकर क्षेत्रीय होने लगा। खण्डात्मक सामाजिक संरचना में अन्तर-आश्रिता कम से कम पाई जाती है। इस संरचना के एक खण्ड में जो घटित होता है उससे अन्य खण्डों पर नाममात्र का प्रभाव भी नहीं पड़ता। अन्तत: यह कहा जा सकता है कि खण्डात्मक सामाजिक संरचनाओं में सापेक्षित रूप से पारस्परिक सम्बन्धों का भौतिक व नैतिक घनत्व कम होता है। इसका अर्थ है कि केवल कम संख्या वाले लोगों में (कम विस्तार) आपसी अत: क्रिया होती है तथा लोग कम बार (घनत्त्व) अंत:क्रिया करते हैं। इसका कारण यह है कि जो काम एक व्यक्ति कर सकता है, वह काम अन्य भी कर सकते हैं अत: लोगों को एक दूसरे पर निर्भर नहीं होना पड़ता है।

अब प्रश्न यह उठता है कि **प्रथा** के कौन से ढंग यांत्रिक एकात्मकता की परिस्थितियों को व्यावहारिक रूप से नियंत्रित करते हैं? इस प्रश्न की व्याख्या दर्खाइम ने सामूहिक चेतना से की है। उसकी धारणा यह है कि चेतना की समरूपता ऐसे नियमों को जन्म देती हैं जो समान विश्वासों व रीतियों पर आधारित हैं। सामाजिक जीवन में धार्मिक तथा आर्थिक संस्थाएं एक दूसरे से घुली-मिली होती हैं और इस तरह के समाज में विभेदीकरण कम होते हैं व एक तरह का आदिम साम्यवाद पाया जाता है। सम्पत्ति पर समानाधिकार होता है, एक से अनुभव होते हैं और नियम, क़ायदे-क़ानून सामान्य जीवन से जुड़े होते हैं। रीतिरिवाजों तथा क़ानूनों से समूह की रक्षा होती है तथा उन्हीं से समूह की सम्पत्ति व भावनाओं का संरक्षण किया जाता है। इस तरह क़ानून की प्रकृति सामूहिक होती है और सामूहिक रूप से ही ग़लत काम करने वाले को दण्ड मिलता है। दंड व्यवस्था से निकली क़ानूनी अनुज्ञाएं (sanctions) सामाजिक सम्बन्धों की संख्या के अनुरूप होती हैं। सामूहिक चेतना इन अनुज्ञाओं का नियमन तथा नियंत्रण करती है। इस प्रकार दंड व्यवस्था तथा अनुज्ञाओं के सापेक्षिक महत्त्व को समझा जा सकता है। समूह के प्रति किये गये ग़लत काम को दंड दिया जाता है। जहाँ एक ओर व्यक्ति विशेष को दंड मिलता है, दूसरी ओर दंड से समाज के **विश्वास** तथा मूल्य मज़बूत होते हैं। हर अपराध समूह की भावनाओं को ठेस पहुँचाता है और हर दंड समूह की सत्ता को पुन: स्थापित करता है।

प्रश्न है कि यदि व्यक्तियों का समूह एक दूसरे पर कम निर्भर है व और स्वयं में सक्षम है, और ऐसे समाज में यदि संचार की सघनता भी कम है, तो ऐसे समूह में सामूहिक चेतना का विकास कैसे हो सकता है? ऐसे समाज के सारे समूहों में सामाजिक नियंत्रण तथा अनुज्ञाएं कैसे संभव हैं?

13.3.1 सामूहिक चेतना

सांस्कृतिक अथवा आदर्शात्मक स्तर पर सामूहिक चेतना के तहत् यांत्रिक एकात्मकता कैसे हो सकती है? दर्खाइम ने सामूहिक चेतना को निम्न प्रकार से परिभाषित किया है: सामूहिक चेतना विश्वासों तथा भावनाओं की वह श्रेणी है जो किसी भी समाज में औसतन प्रकट हो तथा निश्चित प्रकार की व्यवस्था बनाती हो एवम् इसकी अपनी निश्चित प्रकार की जीवनशैली हो। कोई भी सदस्य इनके प्ररूप तथा गुण से सम्बन्धित लक्षणों के आधार पर इनकी पहचान कर सकता है।

13.3.2 सामूहिक चेतना: प्ररूप के आधार पर

सामूहिक चेतना के प्ररूप के सन्दर्भ में दर्खाइम का कहना है कि सामाजिक बंधनों की शक्ति यांत्रिक एकात्मकता का लक्षण है तथा यांत्रिक एकात्मकता के तीन रूप में सामने आते हैं।

i) सामूहिक चेतना तथा व्यक्तिगत चेतना के आयतन के बीच का सम्बन्ध

ii) सामूहिक चैतना की दशाओं की औसत तीव्रता

iii) उन सभी दशाओं की अधिक व कम दृढ़ता।

दूसरे शब्दों में, जितने ही दृढ़ विश्वास व अनुज्ञाएं समाज में विद्यमान होते हैं उतनी ही कम व्यक्ति की स्वतंत्रता की संभावनाएँ होती हैं। अत: जहाँ यांत्रिक एकात्मकता प्रभावशाली होती है वहाँ सामूहिक चेतना विस्तृत व मज़बूत होती है। यह मनुष्यों की गतिविधियों में व्यापक रूप से तारतम्यता लाती है। ऐसी परिस्थितियों में व्यक्तिगत चेतना कठिनाई से सामूहिक चेतना से अलग करने योग्य होती है। यहाँ सामूहिक सत्ता ही पूर्णता की द्योतक है, चाहे यह पूरे समुदाय में विलीन हो अथवा समुदाय के मुखिया में यह सत्ता अवतरित हो।

13.3.3 सामूहिक चेतना: तत्वों के आधार पर

सामूहिक चेतना के गुण के सन्दर्भ में विभेद करने वाले अनेक तत्व होते हैं। मुख्य रूप से इनकी

प्रकृति धार्मिक होती है तथा धर्म का फैलाव मुख्यत: पूरे समाज में होता है। यह इसलिए होता है क्योंकि सामाजिक जीवन मुख्यत: उभयनिष्ट विश्वासों व अनुज्ञाओं द्वारा नियंत्रित होता है जो सर्वसम्मति से स्वीकार किये जाते हैं।

वास्तविकता यह है कि पुराने समय के अविकसित समाजों में हर वस्तु में धर्म का फैलाव हो गया था। सामाजिक वही था जो धार्मिक था, दोनों शब्द आदिम समाजों में पर्यायवाची थे। अपनी बनावट में सामूहिक व सामाजिक लीन कर चेतना मनुष्यों को उसकी इच्छाओं से भी उच्च जगत में पहुँचाती थी। साकार रूप में सामूहिक चेतना की दशाएँ क्षेत्रीय परिस्थितियों से जुड़कर भी प्रजातीय व वातावरण की विशिष्टता के कारण व्यक्ति को उसके उद्देश्यों जैसे जानवर, पेड़, पौधे व अनेकों प्राकृतिक शक्तियों से जोड़ती थीं, बस तभी से लोग इन प्रघटनाओं द्वारा जुड़े हुए हैं। ये प्रघटनाएँ सभी चेतनाओं को समान रूप से प्रभावित करती हैं। सभी व्यक्तियों की चेतना के परिणामस्वरूप समूह-चेतना बनी और ये ही उसके प्ररूप व उद्देश्यों को निश्चित करती हैं। इस प्रकार निर्मित चेतना के निश्चित लक्षण होते हैं।

यांत्रिक एकात्मकता पर चर्चा के बाद सावयवी एकात्मकता पर चर्चा उपभाग 13.4 में होगी। परंतु इसके पहले बोध प्रश्न 1 पूरा करें।

बोध प्रश्न 1

i) निम्नलिखित में से जो सही हो उस पर (V) का निशान लगाइये।

मूल रूप से खण्डात्मक समाज आधारित होते थे।

(अ) जाति पर

(ब) वर्ण पर

(स) प्रजाति पर

(द) कुल पर

ii) निम्नलिखित में से जो सही हो उस पर (V) का निशान लगाइये।

दण्डात्मक कानूनों का उद्देश्य

(अ) व्यक्तियों को अधिक स्वतंत्रता देना था।

(ब) समाज को विभाजित करने का था।

(स) अविकसित समाजों में सामूहिक इच्छा अथवा सामूहिक चेतना के विरुद्ध कार्यों को रोक कर एकात्मकता प्रदान करना था।

(द) समाज में श्रम विभाजन करने का था।

iii) सामूहिक चेतना की परिभाषा तीन पंक्तियों में लिखिए।

.....

.....

.....

iv) यांत्रिक एकात्मकता के अर्थ को तीन पंक्तियों में लिखिए।

.....

.....

.....

13.4 सावयवी एकात्मकता

जहाँ यांत्रिक एकात्मकता सरल समाजों की विशेषता है वहीं सावयवी एकात्मकता जटिल समाजों का लक्षण है।

दर्खाइम ने जटिल समाजों का अध्ययन किया। जटिलता का अर्थ है - कई प्रकार के व्यक्तियों का होना। बढ़ई, लुहार, नाई, प्रकाशक, डॉक्टर, वकील इत्यादि कई प्रकार के व्यक्ति होते हैं। इन सारी असमानताओं के बीच एकात्मकता कैसे हो? यह प्रश्न भिन्न प्रकार का है। यांत्रिक एकात्मकता समानता पर आधारित है। विभिन्नता पर आधारित एकात्मकता "सावयवी एकात्मकता" (organic solidarity) बताई गई है। अवयव का अर्थ शरीर व उसके अंगों से है। हमारे शरीर के अंग असमान हैं- हाथ, आँख, नाक में भिन्नता है। वस्तुओं को उठाना, देखना या वास लेना उनके अलग-अलग कार्य हैं। इसी प्रकार फेफड़े, पेट व दिल विभिन्न अंग (अवयव हैं)। इन सब के अलग होने पर भी संपूर्ण शरीर की अपनी ही एकात्मकता है। सभी अंग अपना-अपना काम करते हैं। ये काम अलग-अलग हैं, और इसी प्रकार शरीर की एकात्मकता इन विभिन्नताओं के बीच है। ऐसी तुलना करने पर इसे सावयवी एकात्मकता कहा गया है। अगर हम यह मान लें कि समाज भी एक अवयव (शरीर) की भाँति है, और विभिन्न प्रकार के व्यक्ति उसके अंग हैं, तब समाज की सावयवी एकात्मकता की कल्पना भी की जा सकती है। यह एकात्मकता विभिन्नता पर आधारित है और इससे व्यक्ति समझता है कि वह स्वयम् में पूर्ण नहीं है, पूर्णता तो समाज में है। इस पूर्णता का आधार श्रम-विभाजन और विभाजित कार्यों का समायोजन है।

दर्खाइम के अनुसार समाज में सावयवी एकात्मकता की अनिवार्य विशेषता श्रम विभाजन का होना है तथा इसने धीरे-धीरे सामाजिक समरूपता को कम कर दिया। व्यक्ति अब समाज के उन अवयवों पर आश्रित रहने लगा जिससे समाज की रचना हुई। समाज इस अर्थ में विभिन्न एवम् विशेष कार्यों की एक व्यवस्था है जो निश्चित परस्पर सम्बन्धों द्वारा जुड़ी है। इस मान्यता के अनुसार व्यक्तियों की विभिन्नता इस सीमा तक सम्भव है कि प्रत्येक व्यक्ति की क्रिया का एक क्षेत्र होता है और व्यक्ति उस क्षेत्र तक सीमित रहता है, इस सब का फल व्यक्ति का स्वयं का व्यक्तित्व है। इस प्रकार यहाँ व्यक्ति विशेष की चेतना सामूहिक चेतना से अवश्य ही स्वतंत्र होती है। अत: यहाँ वे विशेष कार्य निश्चित किए जायें जिसे सामूहिक चेतना नियंत्रित न करती हो और समाज में जितनी ही ये क्रियाएँ अधिक होती हैं सामाजिक एकात्मकता उतनी ही दृढ़ होती है, यह सावयवी एकात्मकता का परिणाम है।

13.4.1 सावयवी एकात्मकता में सामूहिक चेतना के नए रूप

जिन समाजों में सावयवी एकात्मकता अधिक प्रभावशाली होती है उन समाजों की सामाजिक संरचना खण्डात्मक स्वरूपों के विपरीत गुण लिए होती है। इस प्रकार की सामाजिक संरचना में दूसरे विभिन्न अवयवों की विशिष्ट भूमिकाएँ होती हैं जो स्वयं भी विभिन्न भागों से बने होते हैं, तथा इन भागों में परस्पर आश्रितता तथा तारतम्यता एक केन्द्रीय अंग द्वारा नियंत्रित होती है तथा इस विशिष्ट अंग का प्रभाव अन्य सभी अंगों पर होता है। इस प्रकार के गुण के कारण खण्डों का विलयन पूर्णत: हो जाता है तथा व्यक्ति के सम्बन्ध अन्य क्षेत्रों से होने लगते हैं। सम्बन्धों की इन प्रक्रियाओं के आगे बढ़ने से सम्बन्धों का क्षेत्र भी बढ़ता है। अत: व्यक्ति का जीवन केन्द्र वहीं तक सीमित नहीं रहता जहाँ वह रहता है। खण्डों के इस विलयन की प्रक्रिया में बाज़ारों का विलयन भी सम्मिलित होता है जिससे एक बाज़ार (नगर) की धारणा अस्तित्व में आती है तथा यह सम्पूर्ण समाज को अपने में समा लेती है। समाज स्वयं ही एक बड़े बाज़ार में विलीन हो जाता है तथा यह बाज़ार सम्पूर्ण जनसंख्या को अपनी चार दीवारी के अन्दर कर लेता है। यहाँ व्यक्ति अधिक समय तक अपनी **वंश-परम्परा** के आधार पर जुड़े नहीं रहते अपितु इनकी समूहता विशिष्ट प्रकार की सामाजिक क्रियाओं पर होती है। व्यक्ति इन क्रियाओं व समूहों के प्रति निष्ठावान होते हैं। इस

प्रकार की क्रियाओं व सम्बन्धों की प्रकृतियाँ अधिक समय तक व्यक्ति को उसकी जन्मभूमि तक ही सीमित नहीं रखती बल्कि इनका फैलाव उनके कार्य करने के स्थान तक भी हो जाता है।

संगठित सामाजिक संरचना का गुण इसकी अन्तर-निर्भरता की अधिक मात्रा है। उद्योगों की बढ़ती हुई संख्या व श्रम विभाजन में प्रगति सामाजिक समूहों की एकात्मकता को निश्चित करती है। जैसे ही एक स्थान पर परिवर्तन होता है वह धीरे-धीरे दूसरे सिरों पर पहुँचा दिया जाता है। यहाँ पर राज्यों के हस्तक्षेप तथा वैधानिक चलनों की आवश्यकता होती है। अन्त में यह कहा जा सकता है कि संगठित सामाजिक संरचना में सापेक्षित रूप से उच्च आयतन तथा भौतिक तथा नैतिक घनत्व भी उच्च होता है। सामान्यत: अधिक विकास की मात्रा के कारण समाज का आयतन अधिक हो जाता है। परिणामत: श्रम विभाजन भी बढ़ जाता है तथा मनुष्यों की प्रगतिशीलता के क्रम में जनसंख्या अधिक सघन होने लगती है। जैसे ही सामाजिक प्रथाएँ सावयवी एकात्मकता के अनुरूप होती हैं, श्रम विभाजन के वैधानिक नियम भी निर्धारित होने लगते हैं। ये नियम विभाजित कार्यों की प्रकृति व उनके सम्बन्धों को निश्चित करते हैं। इन कार्यों व सम्बन्धों की अवहेलना का निपटारा क्षति-पूरक उपायों से होता है। ऐसे क़ानून अथवा सहयोगात्मक क़ानून, सामाजिक मान्यताओं के साथ सावयवी एकात्मकता की आपात् स्थिति में एक संकेत की भाँति कार्य करते हैं। इसका निर्माण सिविल क़ानून, वाणिज्य क़ानून, संविदा क़ानून, प्रशासनिक क़ानून, तथा संवैधानिक क़ानूनों द्वारा होता है। इस प्रकार के क़ानूनों की उत्पत्ति पैनल दण्डात्मक क़ानूनों से हुई है जो साधारण समाजों में मिलते थे। यहाँ पैनल क़ानून व यांत्रिक एकात्मकता में जैसा परस्पर संबंध देखा गया था कुछ उस प्रकार ही सहयोगात्मक क़ानूनों की सीमा व सामाजिक जीवन बंधन, जो विभाजित श्रम से उत्पन्न हुए, उनमें भी है। कोई भी, तार्किकता द्वारा उन सभी परस्पर निर्भरता के सम्बन्धों को जो समान कार्यों द्वारा लोगों को जोड़कर प्रथाओं द्वारा नियंत्रित होते हैं, मानने से इनकार कर सकता है। इन सभी वैधानिक एवम् प्रथात्मक नियमों की आवश्यकता सावयवी एकात्मकता हेतु होती है। इस प्रकार की एकात्मकता के बने रहने के लिए आवश्यक है कि विभिन्न अवयव एक निश्चित प्रकार से सहयोग करें। यदि ये हर प्रकार से सहयोग नहीं करते तो कम से कम पूर्व निर्धारित परिस्थितियों के अनुसार अवश्य ही करते हैं। अत: मात्र अनुबन्ध ही पूर्णता का द्योतक नहीं है बल्कि इसके सुचारू रूप से पालन हेतु नियमों की जरूरत होती है, ये नियम भी उतने ही जटिल होते हैं जितना कि स्वयं जीवन।

13.4.2 प्ररूप के आधार पर

प्रश्न यह उठता है कि सावयवी एकात्मकता की परिस्थितियों में सामूहिक चेतना का रूप क्या होता है? सामूहिक चेतना के आयतन, तीव्रता एवं निश्चितता को ध्यान में रखते हुए दर्खाइम ने इसके प्ररूप के बारे में तर्क दिया है कि इसका आयतन स्थिर व छोटा होता है जबकि तीव्रता और निश्चितता अवश्य ही क्षीण होने लगती है सामूहिक चेतना विकसित समाजों का मात्र सीमित भाग है। औसतन रूप से सामूहिक चेतना की तीव्रता और निश्चितता की मात्रा विलुप्त होने लगती है, इस प्रकार जब श्रम विभाजन विकसित होने लगता है तो सामूहिक चेतना दुर्बल तथा अस्पष्ट होने लगती है। इसकी प्रवृत्ति कमज़ोर होने से व्यक्ति को समूह की दिशा में ले जाते हुए क्षीण प्रतीत होती है तथा आचरण के नियम अनिश्चित हो जाते हैं, इसलिए व्यक्ति को अपने बारे में चिन्तन-मनन के अधिक अवसर मिलते हैं तथा स्वतंत्रता के भी अधिक अवसर होते हैं।

13.4.3 विषय-वस्तु के आधार पर

सामूहिक चेतना के लक्षण सावयवी एकात्मकता के अन्तर्गत धीरे-धीरे धर्म-निरपेक्ष, मानवतावादी एवं तार्किक होने लगते हैं। ये सामूहिक उत्सुकता के मूल्यों को समाज से समाप्त अथवा क्षीण करने लगते हैं। वैज्ञानिक विचारों के कारण धर्म का संसार तीव्रता से सिकुड़ने लगा तथा कभी न कम होने वाला सामूहिक विश्वास व भावना जो धर्म के कारण दृढ़ थी उनका ह्रास सम्भव हुआ।

सामाजिक संगठन के अद्भुत गुण जो मनुष्य की रुचि से भी उत्कृष्ट थे बहुत तेज़ी से घटते जा रहे हैं।

दर्खाइम ने समूह चेतना के लक्षण विश्वास-व्यवस्था के रूप में देखे थे। आधुनिक समाजों में इसके उच्च मूल्य व्यक्ति को प्रतिष्ठा ही नहीं अपितु अवसर की समानता भी प्रदान करते हैं। इन तथ्यों की व्याख्या दर्खाइम ने एक अन्य कृति, *प्रोफ़ेशनल एथिक्स एण्ड सिविक मॉरल्स (Professional Ethics and Civic Morals)* में की है।

बोध प्रश्न 2

i) निम्नलिखित कथनों में जो सही हों उन पर (v) निशान लगाइये।

यांत्रिक एकात्मकता उन समाजों में मिलती है जिनमे

(अ) समूह समरूपता पर आधारित होते हैं तथा दण्डात्मक क़ानून का प्रचलन होता है।

(ब) समूह विभिन्नता पर आधारित होते हैं तथा दण्डात्मक क़ानून का प्रचलन होता है।

(स) समूह समानता पर आधारित होते हैं तथा क्षति-पूरक क़ानून का प्रचलन होता है।

(द) समूह असमानता पर आधारित होते हैं तथा क्षति-पूरक क़ानून का प्रचलन होता है।

ii) जो निम्नलिखित में सही हों उस पर (v) निशान लागाइये।

दर्खाइम ने यांत्रिक तथा सावयवी एकात्मकता का विवेचन किस पुस्तक में किया है?

(अ) द सुइसाईड

(ब) द एलीमैंट्री फ़ार्म्स ऑफ़ रिलिजस लाइफ़

(स) द डिवीज़न ऑफ़ लेबर इन सोसाइटी

(द) द रूल्स ऑफ़ सोशियोलॉजिकल मैथड

iv) निम्न में से जो सही है उसे ख़ाली स्थान में भरकर कथन को पूरा कीजिए।

सावयवी एकात्मकता जिन समाजों में मिलती है उनकी सामाजिक संरचना .... प्रकार की होती है।

(अ) सरल

(ब) जटिल

(स) मिश्रित

(द) काल्पनिक

v) सावयवी एकात्मकता के स्वरूप की पाँच पंक्तियों में चर्चा कीजिये।

.....

.....

.....

.....

.....

13.5 सारांश

इकाई का सार नीचे तालिका के रूप में स्पष्ट किया जा रहा है। आशा है कि तालिका के माध्यम से यांत्रिक एकात्मकता तथा सावयवी एकात्मकताओं में अंतर याद रखने में आपको मदद मिलेगी। दोनों में अंतर का पहला आधार संरचनात्मक है। दूसरा आधार प्रतिमानों के प्रकार से निर्धारित

होता है। तीसरा आधारा सामूहिक चेतना के लक्षणों अर्थात् प्ररूपों तथा विषय-वस्तु के अनुसार है।

क्रम	यांत्रिक एकात्मकता	सावयवी एकात्मकता
i) संरचना के आधार	समानता पर आधारित होती है।	श्रम विभाजन पर आधारित होती है।
	सर्वाधिक रूप से अविकसित समाजों में मिलती है।	सर्वाधिक रूप से अधिक विकसित समाजों में मिलती है।
	खण्डात्मक प्रकार की होती है, पहले कुल पर आधारित बाद में क्षेत्रीय आधारों पर।	जंटेल प्रकार की होती है (पहले बाज़ारों का विलयन और बाद में नगर की उत्पत्ति)।
	परस्पर आश्रिता की मात्रा कम, सामाजिक सम्बन्ध सापेक्षित रूप से दुर्बल	परस्पर आश्रिता की मात्रा अधिक, सामाजिक सम्बन्ध सापेक्षित रूप से मजबूत।
	सापेक्षित रूप से जनसंख्या का कम आयतन।	सापेक्षिक रूप से जनसंख्या का अधिक आयतन।
	सापेक्षित रूप से भौतिक व नैतिक घनत्व कम।	सापेक्षिक रूप से भौतिक तथा नैतिक घनत्व अधिक।
ii) प्रतिमानों के प्रकार पर	दण्डात्मक नियमों की मान्यताएँ	क्षति-पूरक नियमों की मान्यताएँ।
	पीनल क़ानून का चलन	सहयोगात्मक क़ानून का चलन सिविल, वाणिज्य, संविद, प्रशासनिक तथा संवैधानिक कानून।
iii) सामूहिक चेतना के लक्षण		
(अ) प्ररूप	उच्च आयतन	निम्न आयतन
	उच्च तीव्रता	निम्न तीव्रता
	उच्च निश्चितता	निम्न निश्चितता
	पूर्ण रूपेण सामूहिक सत्ता	व्यक्ति के आत्म प्रयास व विचार के लिए अधिक अवसर।
(ब) विषय-वस्तु	अधिक धार्मिक	धर्मनिरपेक्ष तथा मानवता पर आधारित
	मानव कल्याण से महान तथा वाद-विवाद से परे समाज से उच्च मूल्यों द्वारा संलग्न	मानव कल्याण से सम्बन्धित तथा वाद-विवाद हेतु स्वतंत्र व्यक्ति की अस्मिता उच्च मूल्यों से संलग्न, समान अवसर, कार्य आचरण तथा सामाजिक न्याय
	प्रत्यक्ष एवं विशिष्ट	सैद्धांतिक एवं सामान्य

13.6 शब्दावली

कुल (clan) — क्लैन (clan) का हिन्दी शब्द कुल है। इसको कई वंशजों के ऐसे समूह के लिए प्रयोग करते हैं जिसके सदस्य अपने को किसी दूरस्थ अथवा काल्पित पूर्वज की संतान मानते हैं। आदिम समाजों में पूर्वज को दर्शाने वाले प्रतीक में पशु, पौधा अथवा प्राकृतिक शक्तियों के स्रोत शामिल हो सकते हैं। यह रक्त समूह होता है तथा इसके अन्दर विवाह नहीं होता है।

विश्वास — ऐसे विचार व भावनाएं जो समाज में व्यक्तियों की क्रियाओं को संचालित करते हैं विश्वास कहलाते हैं।

प्रथा — जो पीढ़ी दर पीढ़ी चलने वाले सामाजिक मान्यता प्राप्त व्यवहार को प्रथा कहते हैं। इस व्यवहार का उल्लंघन, सामाजिक दबाव के कारण, सामाजिक रूप से अनुचित माना जाता है। प्रथाओं की शक्ति के सामने राज्य की शक्ति भी दुर्बल प्रतीत होती है।

वंश-परम्परा (lineage) — रक्त मूलक, एकपक्षीय समूह को वंश-परम्परा कहते हैं। जिसके सदस्य रक्त द्वारा अपने पूर्वजों से जुड़े होते हैं। पूर्वजों से जुड़ी कड़ियाँ सदस्यों को ज्ञात होती हैं। प्रत्येक कड़ी का पूरा ज्ञान कुल में प्रायः नहीं होता।

सामूहिक चेतना — किसी समाज के सदस्यों के बीच समान विश्वासों, मान्यताओं एवं भावनाओं की एक व्यवस्था की रचना को सामूहिक चेतना कहते हैं।

सामाजिक एकात्मकता — किसी समूह की उस स्थिति को सामाजिक एकात्मकता कहते हैं जिसमें सामाजिक उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए सहयोग, सद्भाव में सामूहिकता होती हो तथा जो सामाजिक संगठन को उसके स्थायित्व के माध्यम से दर्शाता हो। समाज का उक्त स्वरूप सामाजिक परिस्थितियों के संदर्भ में बदलता रहता है। इसी कारण दर्खाइम ने दो प्रकार के समाजों में दो प्रकार की एकात्मकताओं को बताया है।

यांत्रिक एकात्मकता — अविकसित समाजों में सरल सामाजिक संरचना के नाते समरूपता का लक्षण था। जिससे व्यक्ति का अपना व्यक्तित्व सामूहिक व्यक्तित्व में विलय हो जाता था तथा वह प्रथाओं, धर्म के नियंत्रण से यंत्रवत कार्य करता था। इसी कारण ऐसी सामाजिक एकात्मकता को दर्खाइम ने यांत्रिक एकात्मकता कहा है।

सावयवी एकात्मकता — विकसित समाजों में जटिल सामाजिक संरचना कार्य के अत्यधिक विभाजन से हुई, किन्तु विभाजिक कार्य की इस असमानता ने समाज के व्यक्तियों को आवश्यकताओं के संदर्भ में एक दूसरे पर आश्रित बना दिया। समाज में विद्यमान इन गुणों के कारण व्यक्ति को एक दूसरे से जुड़े रहने को दर्खाइम ने सावयवी एकात्मकता कहा है।

दण्डात्मक कानून — इसका प्रयोग दर्खाइम ने यांत्रिक एकात्मकता को समझाने में

किया है। इसका उद्देश्य सामूहिक चेतना अथवा सामूहिक इच्छा के विरुद्ध कार्यों को रोकना है।

क्षति-पूरक क़ानून

इस क़ानून को दर्खाइम ने आधुनिक समाज की संरचनात्मक विशेषता को समझाने के लिए किया है तथा इसके द्वारा जिसे हानि हुई है उसकी क्षति-पूर्ति का अवसर दिया जाता है।

13.7 कुछ उपयोगी पुस्तकें

बियेर्स्टेड, राबर्ट, 1966. *एमिल दर्खाइम.* वेडेन्फ़ेल्ड निकोल्सन: लंदन

दर्खाइम, एमिल, 1893. *द डिवीज़न ऑफ़ लेबर इन सोसाइटी.* मैकमिलन: लंदन

ल्यूक्स, स्टीवन, 1973. *एमिल दर्खाइम: हिज़ लाइफ़ एण्ड वर्क.* अलेन लेन, द पेंगुइन प्रैस: लंदन

स्मैल्सर, नील जे., 1976. *द सोशियोलॉजी ऑफ़ इकोनोमिक लाइफ़.* प्रेन्टिस हाल आफ़ इंडिया प्राइवेट लिमिटेड: नई दिल्ली

13.8 बोध प्रश्नों के उत्तर

बोध प्रश्न 1

i) (द)

ii) (स)

iii) सामूहिक चेतना विश्वासों तथा भावनाओं की वह श्रृंखला है जो अविकसित समाजों में मूलत: प्रकट होती है तथा निश्चित प्रकार की व्यवस्था के आधार पर जीवन की एक विशिष्ट शैली रखती है। यह व्यक्ति की स्वतंत्रता को कम करके उन समाजों के स्वरूप को धार्मिक बना देती है।

iv) अविकसित समाजों में, सरल सामाजिक संरचना के नाते समरूपता की विशेषता, जिसमें व्यक्ति की इच्छाएँ सामूहिकता में मिल जाती हैं तथा वह धार्मिक प्रथाओं व नियंत्रण के कारण यंत्रवत कार्य करते हुए समाज को एकीकृत करती है, यांत्रिक एकात्मकता कहलाती है।

बोध प्रश्न 2

i) (अ)

ii) (स)

iii) (ब)

iv) विकसित समाजों में कार्य के अत्यधिक विभाजन से सामाजिक संरचना जटिल हो गयी। कार्यों में विभाजन की विभिन्नताओं ने आवश्यकताओं के संदर्भ में व्यक्तियों को एक दूसरे पर आश्रित कर दिया। समाज में विद्यमान इन गुणों द्वारा व्यक्ति के एक दूसरे से अप्रत्यक्ष रूप से जुड़े होने को दर्खाइम ने सावयवी एकात्मकता कहा है।

संदर्भ ग्रंथ सूची

(अ)

आरों, रेमों. 1967. *मेन करेंट्स इन सोशियोलॉजिकल थॉट.* वाल्यूम 2, पेंगुइन बुक्स: लंदन

रॉबर्ट बी., 1966. *एमिल दर्खाइम.* वाईडनफेल्ड एण्ड निकोल्सन्: लंदन

दर्खाइम, एमिल, 1947. *सुइसाइड-ए स्टडी इन सोशियोलॉजी.* (अनुवादक सिम्पसन्) मैकमिलन: न्यूयार्क

दर्खाइम, एमिल, 1950. *द रूल्स ऑफ़ सोशियोलॉजिकल मेथड्,* अनुवादक एस. ए. सोलोवे एण्ड जे. एच. म्यूलर तथा (सम्पादित) ई. जी. कैटलिन, द फ्री प्रेस, ग्लेनको: न्यूयार्क

दर्खाइम, एमिल, 1957. *प्रोफ़ेशनल एथिक्स एण्ड सिविक मॉरल्स.* सी. ब्रुकफील्ड द्वारा अंग्रेजी में अनुवादित. रटलज एण्ड केगन पॉल: लंदन

दर्खाइम, एमिल, 1960. *मॉनटैस्क्यू एण्ड रूसो: प्रीकरसर्स ऑफ़ सोशियोलॉजी.* यूनिवर्सिटी ऑफ़ मिशीगन प्रेस, एन आर्बर: मिशीगन

दर्खाइम, एमिल, 1964. *द डिविज़न ऑफ़ लेबर इन सोसाइटी.* द फ्री प्रेस, ग्लेनको: न्यूयार्क

किंग्सले, डेविस, 1969 *वर्ल्ड अरबनाइज़ेशन, 1950-1970.* यूनीवर्सिटी ऑफ़ कैलीफ़ोर्निया प्रेस: बर्कले

बैंडिक्स, आर. एण्ड एस.एम. लिपसेट, 1966. *क्लास स्टेटस एण्ड पॉवर.* सोशल स्ट्रेटीफ़िकेशन इन कम्पैरेटिव पर्सपेक्टिव: रटलेज एण्ड केगन पॉल लिमिटेड: लंदन

लीच, एडमंड 1982. *सोशल एंथ्रोपॉलजी.* ऑक्सफ़र्ड यूनीवर्सिटी प्रेस: ऑक्सफ़र्ड

ल्यूक्स, स्टीवन, 1973. *एमिल दर्खाइम: हिज़ लाइफ एण्ड वर्क.* ऐलन लेन. द पेंगुइन प्रेस: लंदन

मिल, जे. एस. 1979. *सिस्टम ऑफ़ लॉजिक.* 10वां एडीशन, 2 वाल्यूम, लॉंगमन्स, ग्रीन: लंदन

नंदन, यश, 1980. *एमिल दर्खाइम: कॉंट्रिब्यूशन्स् टू ल एने सोशियोलॉजिक.* द फ्री प्रेस, एक डिविज़न ऑफ़ मैकमिलन पब्लिशिंग कंपनी : न्यूयार्क

निस्बत, आर. ए., 1974. *द सोशियोलॉजी ऑफ़ एमिल दर्खाइम.* ऑक्सफ़ोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस: न्यूयार्क

पिकरिंग, डब्ल्यू.एस.फ. 2002. *दर्खाइम टुडे.* दर्खाइम प्रेस: ऑक्सवर्ड

रेक्स, जॉन, 1961. *की प्राब्लम्स् इन सोशियोलॉजिकल थ्यरी.* रटलेज एण्ड केगन पॉल: लंदन

स्मेलसर. नील जे, 1976. *द सोशियोलॉजी ऑफ़ ऐकनोमिक लाइफ़.* प्रेंटिस हाल ऑफ़ इंडिया लिमिटेड: नई दिल्ली

स्मिथ, ऐडम, 1921. *इनक्वायरी इन टू द नेचर एण्ड काजिज ऑफ़ द वेल्थ ऑफ़ नेशन्स.* वाल्यूम. I, II बेल एण्ड सन्स: लंदन

(ब) हिंदी में उपलब्ध पुस्तकें

दर्खाइम, एमिल, 1982. *समाजशास्त्रीय पद्धति के नियम.* (अनुवादक) हरिश्चन्द्र उप्रेती, राजस्थान हिंदी ग्रंथ अकादमी: जयपुर क्रमांक: 516

चौहान, ब्रजराज, 1994. *समाज विज्ञान के प्रेरक स्रोत: वेबर, मार्क्स, दुर्कहैम.* ए.सी. ब्रदर्स: उदयपुर

श्रीवास्तव, सुरेन्द्र कुमार, *समाज विज्ञान के मूल विचारक.* उत्तरप्रदेश हिंदी ग्रंथ अकादमी: लखनऊ, क्रमांक: 541

वर्मा, ओकप्रकाश, 1983-84. *दर्खाइम एक अध्ययन.* विवेक प्रकाशन: दिल्ली